प्रवेशांक

राजघाट संवाद

www.j-krishnamurti.org

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया | मई – अक्टूबर 2009 | रु. 2

कृष्णमूर्ति : अपनी शिक्षाओं के बारे में
पृष्ठ 3

राजघाट में कृष्णमूर्ति
पृष्ठ 7

जे. कृष्णमूर्ति : जीवन परिचय
पृष्ठ 5

जहां अच्छाई संग–संग खिले

जे. कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के सघन, जीवन्त अध्ययन के लिए राजघाट के अतिरिक्त ऋषिवैली, चेन्नई, बेंगलूरु तथा सह्याद्री में 'स्टडी सेंटर' की परिकल्पना साकार हुई है। ये अध्ययन केंद्र ब्रॉकवुड पार्क व ओहाय में भी हैं। इन केंद्रों के संदर्भ में कृष्णमूर्ति की अन्तर्दृष्टि को उजागर करता यह आलेख हम सभी के लिए बड़े गहरे संकेत सम्प्रेषित करता है।

हज़ार वर्षों तक इसे बना रहना होगा, अदूषित, एक नदी की तरह जिसमें अपने आपको स्वच्छ–निर्मल कर लेने की क्षमता हो; इसका आशय है कि यहां रहने वालों पर किसी तरह की कोई अधिसत्ता, कोई ऑथोरिटी न हो। शिक्षाओं में अपने आप में ही सत्य का प्रामाण्य है, ऑथोरिटी है।

यह अच्छाई के खिलने का स्थल है। ऐसे सहसंवाद और सहयोग का स्थल जो कार्य, आदर्श या किसी व्यक्तिगत सत्ता पर आधारित नहीं है; सहयोग में यह निहित है कि वह किसी विषय विशेष, सिद्धांत, विश्वास वगैरह के इर्द–गिर्द न हो। जब हम इस जगह आते हैं तो हममें से हरएक अपने काम में – चाहे कोई बगीचे में काम कर रहा हो या कुछ और कर रहा हो – कुछ जान–समझ लेता है, काम करते–करते ही, और फिर वह इसके बारे में बात करता है, अन्य लोगों से संवाद करता है ताकि वह जो कह रहा है उस पर सवाल उठाया जाय, संदेह किया जाय, और इस तरह खोजबीन में जो सत्य उसने पाया है उसमें कितना दम है यह पता चल सके। तो यह एक निरंतर संवाद है, कोई एकाकी उपलब्धि, एकाकी संबोधि या समझ नहीं है। हममें से कोई भी यदि कुछ ऐसा पता लगा पाता है जो आधारभूत है, नवीन है तो यह सिर्फ उसके अपने लिए नहीं है बल्कि उन सब लोगों के लिए है जो यहां हैं।

यह कोई समुदाय नहीं है। समुदाय या कम्यून शब्द ही समग्र मानवता से अपने आपको अलग–थलग कर लेने वाली आक्रामक गतिविधि है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि पूरी दुनिया यहां पर आ पहुंचेगी। बुनियादी तौर पर यह एक धार्मिक केंद्र है, जो कृष्णमूर्ति ने धार्मिकता के बारे में कहा है उस दृष्टि से। यह एक ऐसी जगह है जहां व्यक्ति न केवल शारीरिक रूप से क्रियाशील, अवरोधरहित एवं कर्मतत्पर है बल्कि सीखने की एक गतिशीलता भी यहां मौजूद है और इस तरह से हरएक व्यक्ति शिक्षक और शिष्य दोनों बन जाता है। यह जगह किसी व्यक्ति के निजी बुद्धत्व या कलात्मक, धार्मिक या किसी और ढंग से उसकी अपनी संतुष्टि के लिए नहीं है, बल्कि यह तो एक–दूसरे के अच्छाई में प्रस्फुटन हेतु देखभाल और पोषण का स्थल है।

यहां पर रूढ़िग्रस्त अथवा पारंपरिक गतिविधियों से पूरी तरह से निजात पा लेना ज़रूरी है; राष्ट्रीयता के हर तरह के एहसास से, वंशजातिगत पूर्वाग्रहों से, धार्मिक विश्वासों व आस्थाओं से पूर्णतया, समग्र रूप से मुक्ति आवश्यक है। यदि कोई व्यक्ति ईमानदारी और प्रामाणिकता से ऐसा कर पाने में समर्थ नहीं है, तो बेहतर होगा कि वह इस जगह से दूर ही रहे। इस अंतर्दृष्टि को पा लेना मूलभूत रूप से अनिवार्य है कि ज्ञान मनुष्य का शत्रु है। यह जगह भावुकता के लिए नहीं है, रूमानी, भावनाओं में मग्न रहने...

अगले पृष्ठ पर जारी

पहला अंक

कृष्णमूर्ति की जन्मतिथि 11 मई के अवसर पर 'राजघाट संवाद' का यह प्रवेशांक निकालते हुए अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। राजघाट का यह हीरक जयंती वर्ष भी है। राजघाट शिक्षा केंद्र को स्थापित हुए 75 वर्ष हो चुके हैं। आज इस परिसर में राजघाट बेसेंट स्कूल के नाम से एक आवासीय विद्यालय, वसंत महिला महाविद्यालय, रूरल सेंटर एवं कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर है, जहां पूरे विश्व से लोग कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के अध्ययन के लिए आते हैं।

समूचे हिंदी क्षेत्र तथा उत्तर एवं मध्य भारत में कृष्णमूर्ति शिक्षा में रुचि रखने वाले जिज्ञासुओं को आपस में जोड़ने का कार्य 'राजघाट संवाद' कर सके, इस भरोसे के साथ यह प्रवेशांक प्रस्तुत है।

जे. कृष्णमूर्ति शिक्षाओं की एक नयी वेबसाइट

कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के संरक्षण के लिए विश्व के कई हिस्सों में संस्थापित कृष्णमूर्ति फाउंडेशन के सम्मिलित प्रयासों से एक नयी वेबसाइट प्रारंभ हुई है : www.jkrishnamurti.org इस नयी वेबसाइट पर सन् 1933 से 1986 तक कृष्णमूर्ति की अब तक समस्त प्रकाशित पुस्तकों का एक वृहद अंश, जो औसत आकार की लगभग 200 पुस्तकों के बराबर है, निःशुल्क अध्ययन एवं डाउनलोडिंग के लिए उपलब्ध है।

"विचार स्वयं में ही अनवधान है।"

अच्छाई के खिलने का स्थल

वाले लोगों के लिए नहीं है। यहां एक अच्छे मस्तिष्क की दरकार है, जिसका अर्थ कोरी बौद्धिकता नहीं है; हमारा मतलब है एक ऐसा मस्तिष्क जो वस्तुनिष्ठ है, बुनियादी तौर पर ईमानदार है और जिसकी कथनी–करनी में अंतर नहीं है।

संवाद बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह संप्रेषण का, बातचीत का एक ऐसा ढंग है जिसमें प्रश्न और उत्तर वहां तक जारी रहते हैं जिस बिंदु पर प्रश्न को बिना किसी उत्तर के रहने दिया जाता है। तो वे दो व्यक्ति जो उत्तर और प्रश्न में सहभागी थे, उनके बीच वह प्रश्न अब स्थगित–स्थिर हो जाता है, एक ऐसी कली की तरह जिसका स्पर्श न किया जा रहा हो और यदि उस प्रश्न को विचार से पूरी तरह अनछुआ छोड़ दिया जाता है, तो उसका तब एक अपना ही उत्तर होता है क्योंकि प्रश्न करने वाला और उत्तर देने वाला अब रहे ही नहीं। संवाद का यह ऐसा रूप है जिसमें हमारा अन्वेषण उत्कटता और गहनता के ऐसे स्तर तक आ पहुंचता है, जिसमें अब वह गुणधर्म आ जाता है जिस तक विचार कभी नहीं पहुंच सकता। तब यह अभिमतों और धारणाओं की द्वंद्वात्मक खोजबीन भर नहीं रह जाता, बल्कि यह दो या अधिक, अच्छे एवं गंभीर मस्तिष्कों की सहभागिता में जारी अनुसंधान होता है।

यह स्थल वृक्षों, पक्षियों और ख़ामोशी के अगाध सौंदर्य से परिपूर्ण होना चाहिए, क्योंकि सौंदर्य सत्य है, और सत्य है अच्छाई एवं प्रेम। बाहर के सौंदर्य, बाहर की प्रशांति, ख़ामोशी का असर भीतर की शांति पर, चुप्पी पर पड़ सकता है, लेकिन इस वातावरण से आंतरिक सौंदर्य किसी भी प्रकार से प्रभावित न हो। सौंदर्य केवल तभी संभव है, जब 'स्व' नहीं है, 'मैं' नहीं है; यहां का परिवेश अद्‌भुत हो यह तो ज़रूरी है, पर यह लीन कर लेने वाला न बने, जैसे किसी खिलौने में बच्चा लीन हो जाता है। यहां कोई खेल–खिलौने नहीं हैं, बल्कि यहां तो ऐसी आंतरिक गहराई, सघनता और अखंडता है जिसे विचार ने नहीं बनाया है।

– कृष्णमूर्ति द्वारा 26 से 27 जनवरी 1984 के बीच 'वसंत विहार', मद्रास में लिखाये गये एक वक्तव्य से

जे. कृष्णमूर्ति परिसंवाद

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित इस त्रैमासिक पत्रिका में कृष्णमूर्ति के प्रकाशित–अप्रकाशित साहित्य में से चुने गये अंशों को हिन्दी में अनूदित कर प्रस्तुत किया जाता हैं। इसके अतिरिक्त पत्रिका में कृष्णमूर्ति से संबंधित आलेखों, साक्षात्कारों, नये प्रकाशनों, कार्यशालाओं, रिट्रीट, गैदरिंग एवं फाउंडेशन से संबंधित अन्य सूचनाएं भी प्रकाशित होती हैं।

'परिसंवाद' की सदस्यता के लिए शुल्क

एकवर्षीय सदस्यता : 100 रुपये

पांचवर्षीय सदस्यता : 350 रुपये

आजीवन सदस्यता : 1000 रुपये

विशेष : 'परिसंवाद' के पुराने अंकों के सात खंड तैयार किये गये हैं जिनमें सन् 1986 से लेकर 2006 तक के अंकों का संकलन है। एक खंड का मूल्य 150 रुपये है।

नयी किताबें

सोच क्या है? कृष्णमूर्ति की पुस्तक *नेटवर्क ऑफ थॉट* का यह हिंदी अनुवाद है। 1981 में सानेन और एम्स्टर्डम में दी गयी इन वार्ताओं में कृष्णमूर्ति मनुष्य मन की संस्कारबद्धता को कम्प्यूटर की प्रोग्रामिंग जैसा बताते हैं। हर व्यक्ति अपने विशिष्ट नियोजन यानी 'प्रोग्राम' के मुताबिक सोचता है, हर कोई अपने खास तरह के विचार के जाल में फंसा है। वास्तविक स्वतंत्रता इस नियोजन से मुक्त होने में है। राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली–110006 द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक का मूल्य 125 रुपये है।

मरना क्या है, जीना क्या है : कृष्णमूर्ति की वार्ताओं एवं संवादों से चुन कर निकाले गये अंशों से तैयार किया गया यह संग्रह *On Living and Dying* पुस्तक का हिंदी अनुवाद है। जीवन को समझने के लिए मृत्यु को समझना आवश्यक है। बिना यह गहराई से समझे कि मरना क्या है, हम जीना भी नहीं जान सकते। इस पुस्तक का प्रकाशन राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली–110006 द्वारा किया जा रहा है।

कृष्णमूर्ति हिंदी रिट्रीट

कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर, राजघाट में 27 से 29 सितंबर, 2009 के बीच एक विशेष अध्ययन अवकाश का आयोजन किया जा रहा है। रिट्रीट का कुल शुल्क 600 रुपये है जिसे मनीऑर्डर से या 'के.एफ.आई. स्टडी सेंटर' के नाम ड्राफ्ट बनाकर इस पते पर भेज सकते हैं : कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221 001
ईमेल : kcentrevns@gmail.com

कृष्णमूर्ति अध्ययन स्कॉलरशिप

पिछले कुछ वर्षों से प्रदत्त बुद्ध–कृष्णमूर्ति अध्ययन स्कॉलरशिप का स्वरूप इस साल से अधिक व्यापक कर दिया गया है। यह स्कॉलरशिप विविध संदर्भों में कृष्णमूर्ति की शिक्षाओं के अनुसंधान हेतु है, अब यह केवल बुद्ध की शिक्षाओं से उनकी तुलना तक सीमित नहीं होगी। वर्ष 2009 के लिए आवेदन आमंत्रित हैं। संपर्क करें : सचिव, राजघाट शिक्षण संस्थान, राजघाट फोर्ट,
वाराणसी 221 001

मेलिंग लिस्ट

राजघाट संवाद साल में दो बार, मई एवं नवम्बर माह में, प्रकाशित किया जाएगा तथा कृष्णमूर्ति की शिक्षा में रुचि रखने वाले मित्रों को यह निःशुल्क भेजा जाएगा। इसकी निःशुल्क प्रति मंगवाने के लिए आप अपना तथा अपने मित्रों के नाम–पते लिखकर हमें भेज सकते हैं। 'राजघाट संवाद' का ई–संस्करण वेबसाइट पर भी उपलब्ध कराया जाएगा।

यदि आप अपने शहर, गांव या कस्बे में कृष्णमूर्ति अध्ययन केंद्र चलाते हैं या चलाने के इच्छुक हैं तो हमें इसके बारे में अवश्य लिखें : जे. कृष्णमूर्ति प्रज्ञा परिषद्, कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221 001
फोन : 0542–2441289, 2440453
ईमेल : kcentrevns@gmail.com

"अपने बारे में मत सोचिए, परंतु उस विचार, भाव, या क्रिया के प्रति सजग रहिए जिसकी वजह से आप अपने बारे में सोचने लग जाते हैं।"

कृष्णमूर्ति : अपनी शिक्षाओं के बारे में

विश्व में जहां भी मैं गया हूं मुझसे पूछा गया है कि क्या मेरा उद्देश्य एक दूसरे धर्म की स्थापना करना है, अनुष्ठानों को बढ़ावा देना है, शिष्यों का चुनाव करना है। इन सभी प्रश्नों का मेरा उत्तर यह है कि नये धर्मों, नये विश्वासों, नये मतों तथा नये अनुष्ठानों की स्थापना करने की मेरी इच्छा नहीं है, क्योंकि मेरे लिए ये सारे निरर्थक हैं तथा जीवन की पूर्णता के लिए ग़ैरज़रूरी हैं।

मेरा कोई शिष्य और अनुयायी नहीं है क्योंकि मेरे लिए यह सत्य को सीमित करने जैसा होगा।

मेरे जीवन का एक मात्र उद्देश्य है लोगों की उस मुक्ति और आनंद को प्राप्त करने में सहायता करना जिन्हें मैं स्वयं प्राप्त कर चुका हूं और जो संपूर्ण मानवता के लिए अंतिम लक्ष्य है।

मेरी शिक्षाएं न रहस्यपूर्ण हैं न गुह्य, क्योंकि मेरी समझ से रहस्यवाद और गुह्यविद्या ये दोनों ही मनुष्य द्वारा सत्य पर सीमाओं के आरोपण हैं। धार्मिक मतों एवं विश्वासों से जीवन कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है और जीवन को पूरी तरह फलने–फूलने का मौका देने के लिए यह ज़रूरी है कि आप जीवन को विश्वास, परंपरा और सत्ता–प्रामाण्य से, अथॉरिटी से, मुक्त कर दें। परंतु जो लोग इन चीज़ों से बंधे हैं उन्हें सत्य को समझने में कठिनाई होगी।

सारे विश्व में जिस तरह के प्रश्न मेरे सामने रखे जाते रहे हैं उनसे यह पता चलता है कि कितने थोड़े से लोग जीवन की सच्ची स्वतंत्रता को समझने और पाने के लिए वास्तव में इच्छुक हैं। वे प्राचीन धर्मशास्त्रों तथा प्रमाण माने जाने वाले व्यक्तियों के उद्धरण मेरे सामने रखते हैं और यह मान लेते हैं कि उन्होंने स्वयं अपनी समस्याएं सामने रख दी हैं। परन्तु जो लोग जीवन को समझना चाहते हैं उन्हें परंपरा की संकीर्ण चारदीवारियों के बाहर सत्य की खोज करनी होगी – गुरुजनों के आदेशों से अलग हटकर, भले ही वे गुरुजन कितने ही बड़े पंडित और ज्ञानी क्यों न हों।

जो अभी छोटे हैं, परंपरा में शायद उनके लिए कोई उपादेयता हो, क्योंकि सुरक्षा अभी उनकी ज़रूरत है, लेकिन दुख और अनुभव से यह इच्छा तो उत्पन्न होनी ही चाहिए कि हम सीमित करने वाली सारी दीवारों को तोड़ दें और मुक्त हो जायें। मनुष्य हर जगह मार्गदर्शन की खोज करता है, वह जानकार लोगों से उम्मीद करता है कि वे उसे यह बता दें कि सही क्या है और ग़लत क्या है, सत्य क्या है और मिथ्या क्या है, आवश्यक क्या है और अनावश्यक क्या है।

अपने बल–बूते पर विकसित होने के बजाय अगर आप किसी व्यक्ति के प्रामाण्य पर सुख–सांत्वना और मदद पाने के लिए निर्भर होंगे तो अंधेरा ही आयेगा और सत्य को अपने पीछे छिपा लेगा। जब आप किसी अथॉरिटी पर निर्भर करने लगते हैं तो आप सर्जनात्मक चिंतन की स्वयं अपनी शक्ति को खो बैठते हैं।

हर व्यक्ति के भीतर मौजूद सर्जनात्मक ऊर्जा को मैं मुक्त करन चाहूंगा ताकि वह स्वयं को पा सके तथा अपने व्यक्तिगत अनूठेपन को विकसित कर सके, जिससे कि वह सुबह के उस गुलाब की तरह खिल सके जो हवा को अपनी खुशबू देता है तथा हर पथिक को अपनी ताजगी और सुगंध से आनंदित कर देता है।

यदि आप सिर्फ दूसरों का अनुसरण करते रहे, उनको सुनते रहे और उनकी बात पर चलते रहे, तो आप आनंद और मुक्ति को कभी उपलब्ध नहीं कर सकते। पुस्तकों या व्यक्तियों का प्रामाण्य मन और हृदय को कभी विकसित नहीं कर सकता। इसके विपरीत यह उसका गला घोंट देगा।

अधिकांश लोग जीवन के स्रोत में नहीं बल्कि जीवन के सतही स्तर में ही अधिक दिलचस्पी रखते हैं। वे जानकार व्यक्तियों के प्रामाण्य का सहारा लेते हैं, क्योंकि वे जीवन और इसकी समस्याओं, दुखों और पीड़ाओं का सामना करने से डरते हैं। उन्हें यह बताना मेरा उद्देश्य है कि कोई भी व्यक्ति, चाहे वह कितना ही बड़ा ज्ञानी क्यों न हो, इसमें कभी कोई सहायता नहीं कर सकता। किसी व्यक्ति की अथॉरिटी के अधीन जीने का अर्थ है किसी पेड़ के साये के तले जीना। वह साया सुन्दर, सुखद और शीतल हो सकता है, लेकिन जैसे–जैसे सूरज आगे बढ़ता जायेगा साया खिसकता जायेगा और इसलिए आपको भी निरंतर जगह बदलनी पड़ेगी, और इस तरह आप अपनी शांति और सुख–चैन गंवा बैठेंगे।

जब कोई बहुत बड़ी बाढ़ आती है तो सैकड़ों घरों, सुन्दर बगीचों तथा हरे–भरे मैदानों को बहा ले जाती है। अतः यदि आपको सत्य का साक्षात्कार करना है तो सब कुछ बह कर दूर हो जाना चाहिए और इस प्रक्रिया में विनाश होगा, विशृंखलता होगी, बहुत बड़ी अनिश्चितता और चिन्ता उत्पन्न होगी। यदि आप सत्य को समझना चाहते हैं तो आपको यह बात अच्छी तरह अनुभव कर लेनी चाहिए कि सत्य को नीचे नहीं लाया जा सकता, जैसे कि बिजलीघर में व्यावहारिक उपयोग के लिए उच्चशक्ति वाली बिजली को नीचे लाया जाता है। उस तरह आप सत्य को सीमित नहीं कर सकते, उसे नीचे नहीं ला सकते। अपनी सीमा के स्तर पर सत्य को लाने की कोशिश करने के बजाय स्वयं सत्य तक पहुंचिए।

सत्य को बांधना ही जीवन का बन्धन है। मेरी समझ यह है कि जब आप जीवन को बांधते हैं तो उसका परिणाम होता है गतिरोध और दुख। जीवन की स्वतंत्रता समझ से आती है, सुख–सान्त्वना से नहीं। चूकि युगों–युगों से मानव की इच्छा रही है सत्य को अपनी समझ के स्तर पर लाने की, अतः असंख्य पिंजरे निर्मित हो गये हैं और मानव एक पिंजरे को छोड़कर दूसरे पिंजरे में जाता रहा है – कभी–कभी शायद किसी अधिक बड़े पिंजरे में, लेकिन वह भी होता तो एक पिंजरा ही है।

सारे धर्म और सम्प्रदाय मन को समझ तथा हृदय की पूर्णता देने के बजाय सुख–सान्त्वना देने की ही प्रवृत्ति रखते हैं। यदि आप अपने हृदय को इसकी थकान से मुक्त करना चाहते हैं तो सुख–सान्त्वना की खोज मत करें, क्योंकि इससे जीवन की पूर्णता कभी नहीं आएगी, इससे तो केवल बाधा ही उत्पन्न होगी, आपके और उस सत्य के बीच जिसे आप खोज रहे हैं।

व्यक्ति–व्यक्ति के बोध के अनुसार सत्य का स्वरूप भिन्न होगा, और सच्ची संस्कृति उसी सर्जनात्मक बोध की अभिव्यक्ति है। जहां आपको उस शाश्वत सत्य की एक झलक मिली कि वह एक मार्गदर्शन के रूप में कार्य करने लगेगा। जैसे एक जहाज कम्पास से नियंत्रित और निर्देशित होता है उसी तरह आप जिस सत्य को देख लेंगे उससे आप विचार और भाव की अस्तव्यस्तता के

अगले पृष्ठ पर जारी

कृष्णमूर्ति : अपनी शिक्षाओं के बारे में

दौरान स्वयं अपना मार्गदर्शन करेंगे। अतः आप स्वयं अपने आप में एक ज्योति बन जाते हैं और इसलिए आप किसी व्यक्ति के मार्ग पर या उसके चेहरे पर अपना साया नहीं पड़ने देते।

सत्य में असफलता या भूल, शुभ या अशुभ, इस तरह की चीज़ें होती ही नहीं। जीवन में सफलता आदि के लिए तो अनुभव ही सब कुछ है लेकिन पूर्णता की उपलब्धि तभी होती है जब आप अनुभव की आवश्यकता से परे चले जाते हैं।

जिस तरह मैं परम्पराओं और विश्वासों से मुक्त हूं, मैं अन्य लोगों को भी उन विश्वासों, मतों, सम्प्रदायों और धर्मों से मुक्त करूंगा जो जीवन को संस्कारबद्ध कर देते हैं। और मैं बोल रहा हूं उसी दृष्टि से, न कि किसी नये धार्मिक मत की शिक्षा देने या एक नये प्रामाण्य को आरोपित करने की मंशा से। जिस तरह कि मैं स्वयं समस्त सीमा से मुक्त हो चुका हूं, मेरी इच्छा सभी मनुष्यों को मुक्त करने की है।

सभी समस्याओं का समाधान करने वाला मैं कोई चमत्कारी पुरुष नहीं हूं। मैं लोगों को प्रेरित करना चाहता हूं कि वे स्वयं सोचे–विचारें। जिन चीज़ों को वे अत्यंत प्रिय और बहुमूल्य मानते हैं, मैं चाहता हूं कि वे उन्हीं पर सवाल उठाएं ताकि उस संदेह को आमन्त्रित करने के बाद सिर्फ वही चीज़ ही बाकी रह जाये जिसका शाश्वत मूल्य है।

–इंटरनैशनल स्टार बुलेटिन , जनवरी 1930

''क्या आप बिना शब्द के, बिना उन स्मृतियों और चित्रों के जो उस शब्द के साथ जुड़ी हुई हैं, अवलोकन कर सकते हैं? क्या आप अपनी पत्नी को या अपनी महिला मित्र या अपने पति को, बिना उस शब्द 'पत्नी' के, बिना उन स्मृतियों के जो उस शब्द के साथ जुड़ी हुई हैं, देख सकते हैं? अब ज़रा इसके महत्त्व को देखिए – तब आप पत्नी, या पति, या नदी को इस तरह देखते हैं जैसे कि आप उन्हें पहली बार देख रहे हों! अगर आप सुबह उठकर अपनी खिड़की से बाहर झांकते हैं तो आपको जो कुछ दिखाई देगा – पर्वत, घाटियां, पेड़ या हरे–भरे मैदान – वह एकदम अद्‌भुत होगा क्योंकि तब आप इस तरह देख रहे होंगे जैसे आप अभी जन्मे हों।''

आपको अपने जीने का तरीका बदलना होगा

आपके पास बहुत थोड़ा समय है, शायद दस बरस या पचास बरस, लेकिन इन्हें बर्बाद मत करिए। इसे ध्यान से देखिए, अपना जीवन लगाइये इसे समझने में।

प्रश्नकर्त्ता : आपकी वार्ताओं को सुनने हुए काफी समय हो गया है, लेकिन कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

जे. कृष्णमूर्ति : ''आपकी वार्ताओं को सुनते हुए मुझे कुछ साल हो गये हैं, लेकिन मेरे अन्दर कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।'' तब और मत सुनिए।

देखिए सर, आप किसी को सालों से सुनते आए हैं और जो कहा जाता रहा है उसके सौन्दर्य को आपने स्वयं महसूस भी किया है, तब आप उसे और सुनना चाहेंगे, क्योकि तब यह आपके लिए उन द्वारों को खोलता है जिन्हें आपने पहले कभी नहीं देखा था। लेकिन अगर ऐसा नहीं होता है तो ग़लती कहां पर है? जो यह सब कह रहा है उस वक्ता की आख़िर कहां ग़लती है, या जो इन्हें सुन रहा है उसकी कहां ग़लती है? ऐसा क्यों है कि वक्ता को कई सालों तक सुनने के बाद भी कोई व्यक्ति नहीं बदलता है? कितनी व्यथा होती है न?

आप किसी फूल को देखते हैं, सड़क के किनारे एक प्यारे से फूल को, आप उस पर एक नज़र डालते हुए आगे बढ़ जाते हैं। आप रुकते नहीं उसे देखने के लिए, उसके सौन्दर्य, उसके माधुर्य और उसकी शान्त गरिमा को निरखने, महसूस करने के लिए। आप बस आगे बढ़ जाते हैं। कहां ग़लती है? कहीं ऐसा तो नहीं कि आप गम्भीर नहीं हैं, आपको उस चीज़ से कोई मतलब ही नहीं हैं? या आप इतनी सारी समस्याओं से घिरे हुए हैं कि आपको फुर्सत नहीं है कि रुककर उस फूल को कभी निहार सकें?

या कहीं ऐसा तो नहीं कि वक्ता जो कुछ कह रहा है उसका अपने आप में ही कोई महत्त्व नहीं – यह नहीं कि उसके बारे में आप क्या राय रखते हैं – बल्कि जो बात कही जा रही है स्वयं में उसी का कोई मूल्य नहीं? क्या उसका कोई मतलब नहीं है? मतलब है या नहीं यह तय करने के लिए आपको इसकी छानबीन में उतरना पड़ेगा कि वह क्या कहता है। और छानबीन के लिए यह बहुत ज़रूरी है कि आपके पास सुनने की क्षमता हो, देखने और महसूस करने की काबिलियत हो, और अपना वक़्त देने के लिए आप तैयार हों। तब यह आपकी ज़िम्मेदारी है या वक्ता की? यह हम दोनों ही की ज़िम्मेदारी है। क्या आपको ऐसा नहीं लगता? हम दोनों को ही इसमें एक साथ उतरना पड़ेगा। वक्ता इशारा कर सकता है, लेकिन देखना तो आपको ही होगा, उसमें पैठना भी होगा, और सीखना भी। और यदि आपका मन सजग और सतर्क नहीं है, ध्यानपूर्वक देखने के लिए तत्पर नहीं है, और, बहुत संवेदनशील भी नहीं है, तब

अगले पृष्ठ पर जारी

आपको अपने जीने का...

फिर यह आपकी ज़िम्मेदारी है। इसका अर्थ है कि आपको अपने जीने का तरीका बदलना होगा, सब कुछ बदलना होगा जिससे कि आप जीने का ऐसा ढंग सीख सकें जो पूर्णतया भिन्न है। और इसके लिए ज़रूरत है ऊर्जा की, उत्कटता की, आपको सुस्त, मन्द या आलसी नहीं होना होगा।

तो यह हमारी आपसी जिम्मेदारी है; हो सकता है वक्ता से अधिक आपकी। सर, मुझे लगता है शायद आपने अपना जीवन इसमें नहीं लगाया हैं। हम जीवन की बात कर रहे हैं, विचारों, सिद्धान्तों, साधनाओं या तकनीक की नहीं बल्कि समग्र जीवन की, जो कि आपका जीवन है, और जिसे आपको गहराई से देखना है, समझना है और उसकी देखभाल करनी है। और इसका अर्थ है आपको अपना जीवन व्यर्थ नहीं गंवाना है। आपके पास बहुत थोड़ा समय है, शायद दस बरस या पचास बरस, लेकिन इन्हें बर्बाद मत करिए। इसे ध्यान से देखिए, अपना जीवन लगाइये इसे समझने में।

– *मीटिंग लाइफ* से

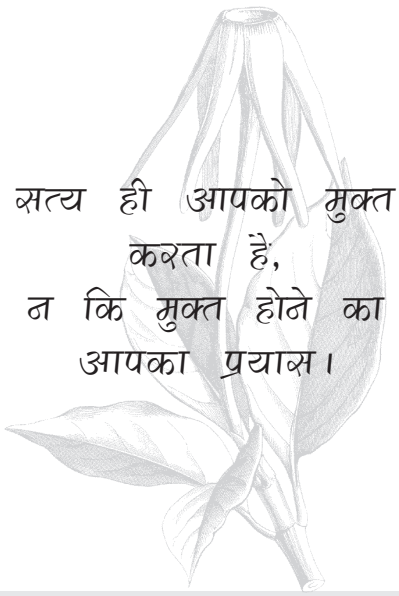

सत्य ही आपको मुक्त करता है,
न कि मुक्त होने का
आपका प्रयास।

के.एफ.आई. पब्लिक गैदरिंग : 2009

कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया का वार्षिक सम्मेलन इस वर्ष राजघाट में 11 से 14 नवंबर के बीच आयोजित किया जाएगा। सम्मेलन में भाग लेने के लिए संपर्क करें : कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221 001
ईमेल : kcentrevns@gmail.com

जे. कृष्णमूर्ति : जीवन परिचय

जे. कृष्णमूर्ति का जन्म 11 मई 1895 को आन्ध्र प्रदेश के एक छोटे से कस्बे मदनापल्ली में एक धर्मपरायण परिवार में हुआ था। किशोर अवस्था में उन्हें थियोसॉफिकल सोसाइटी की अध्यक्ष डॉ. एनी बेसेंट ने गोद ले लिया। श्रीमती बेसेंट और थियोसॉफी के अन्य अनुयायियों ने कृष्णमूर्ति को आगामी विश्व शिक्षक घोषित किया। मानवता के उद्धार के लिए समय–समय पर 'विश्व शिक्षक' मनुष्य के रूप में अवतरित होता है, ऐसा विभिन्न धर्मग्रंथों में वर्णित है। थियोसॉफी के अनुयायी इसकी भविष्यवाणी पहले ही कर चुके थे, और अब 'उसके' आगमन की तैयारी के लिए 'ऑर्डर ऑफ द स्टार इन द ईस्ट' नाम से एक विशाल संगठन 1911 में खड़ा किया गया। युवा कृष्णमूर्ति को इसका प्रमुख बनाया गया।

सन् 1922 में कृष्णमूर्ति किन्हीं गहरी आध्यात्मिक अनुभूतियों से गुज़रे जो उनकी जीवनदृष्टि में क्रान्तिकारी परिवर्तन ले आयीं। सन् 1929 में उन्होंने इस ऐतिहासिक उद्घोषणा के साथ 'ऑर्डर' को भंग कर दिया : *''सत्य एक पथहीन भूमि है; वहां तक आप किसी भी मार्ग, किसी भी धर्म या किसी भी सम्प्रदाय के द्वारा नहीं पहुंच सकते... सत्य असीमित और अप्रतिबन्धित है... उसे संगठित नहीं किया जा सकता। मेरा सरोकार मनुष्य को परम एवं निर्विकल्प रूप से मुक्त करने से है।''*

उन्होंने 'ऑर्डर' को दी गयीं समस्त धन एवं भू सम्पदाएं लोगों को लौटा दीं। इसके बाद अगले पचास से भी अधिक सालों तक, 17 फरवरी 1986 को ओहाय (अमेरिका) में निधन हो जाने तक, वे अनथक रूप से पूरी दुनिया का दौरा करते रहे – सार्वजनिक वार्ताएं करते हुए, जीवन के गहन प्रश्नों पर परस्पर संवाद एवं वार्तालाप करते हुए, वैज्ञानिकों, मनोवैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों, विचारकों एवं सत्य के खोजियों के साथ परिचर्चाएं करते हुए। सत्य के प्रेमी एवं मित्र के रूप में उन्होंने यह भूमिका निभाई; गुरु या प्रामाण्य के तौर पर उन्होंने स्वयं को कभी नहीं रखा। इस संदर्भ में एक जिज्ञासु के प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा – *'आपके जीवन के लिए मैं बस एक दर्पण का कार्य कर रहा हूं, उसमें आप जैसे भी हैं स्वयं को हू–ब–हू देख सकते हैं और तब आप उस दर्पण को फेंक सकते हैं। दर्पण महत्त्वपूर्ण नहीं है।'*

जे. कृष्णमूर्ति ने अपना सारा जीवन मनुष्य को उसकी संस्कारबद्धता एवं स्वतन्त्रता की सम्भावना के प्रति सचेत करने के लिए समर्पित किया। उन्होंने बड़ी बारीकी से मानव मन की गुत्थियों की ओर संकेत किया और उनके प्रति चुनावरहित एवं निष्पक्ष भाव से सजग होने के लिए कहा। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि हमारा दैनिक जीवन सच्चे अर्थों में सजगता, ध्यान एवं सृजन की ऊर्जा से आलोकित होना चाहिए। एक ऐसे आमूलचूल एवं बुनियादी परिवर्तन की आवश्यकता पर उन्होंने बल दिया जो एक नितांत नये मानस और नयी संस्कृति को जन्म दे सके। उन्होंने कहा, *''आमूल परिवर्तन भविष्य में नहीं होता, वह कभी भविष्य में नहीं हो सकता। वह केवल अभी, क्षण–प्रतिक्षण, संभव है। ...मिथ्या को मिथ्या के रूप में देखना और सत्य को सत्य के रूप में देखना ही आमूल परिवर्तन है, क्योंकि जब आप किसी बात को बड़ी स्पष्टता से सत्य के रूप में देख लेते हैं, वही सत्य आपको मुक्त कर देता है...'*

कृष्णमूर्ति को विश्व के महान द्रष्टाओं एवं शिक्षकों में से एक माना जाता है। उन्होंने स्वयं को कभी किसी ख़ास धर्म, सम्प्रदाय, विचारधारा या राष्ट्रीय सीमा से बंधा हुआ नहीं माना। उनकी दृष्टि में किसी भी प्रकार का विभाजन या विशिष्टीकरण मानव–मानव के बीच अलगाव लाता है और आखिरकार संघर्ष एवं युद्ध का कारण बनता है। ओहाय (कैलीफोर्निया), सानेन (स्विट्ज़रलैंड), ब्रॉकवुड पार्क (इंग्लैंड) और भारत के विभिन्न स्थानों में होने वाली उनकी सालाना वार्ताओं में हजारों की संख्या में अलग–अलग देशों, व्यवसायों

अगले पृष्ठ पर जारी

सही शिक्षा क्या है?

प्रश्न : सही शिक्षा के अनिवार्य तत्त्व क्या हैं?

कृष्णमूर्ति : निश्चित रूप से यह समस्या काफी जटिल है, है न? क्या आप सोचते हैं कि इसका उत्तर कुछ मिनटों में दिया जा सकता है? पर शायद इस प्रश्न में जो बात महत्त्व की है, उसे हम देख सकते हैं।

अपने आपको और अपने बच्चों को हम किसलिए शिक्षित कर रहे हैं? युद्ध के लिए? अधिक जानकारी के लिए ताकि हम एक दूसरे का संहार कर सकें? तकनीक सीखने के लिए, जिससे हम जीविका अर्जित कर सकें? सूचना, संस्कृति, प्रतिष्ठा के लिए? असल बात क्या है? क्या कारण है कि हम अपने बच्चों को शिक्षित कर रहे हैं? हमें यह वास्तव में पता ही नहीं है, या है? हमें पता हो ही कैसे सकता है जब हम स्वयं ही इस कदर भ्रांति में हैं। दरअसल हम जो कुछ भी करते हैं, हमें युद्ध की ओर, अपने पड़ोसियों के और स्वयं के भी विनाश की ओर ले जाता है। हम बच्चे को प्रतिस्पर्द्धा की शिक्षा दे रहे हैं, उसके 'मैं' को पक्का कर रहे हैं, उसका अनुकूलन इस तरह से कर रहे हैं ताकि वह इस लड़ाई में टिका रह सके; साथ ही हम सूचना व जानकारी के विविध प्रकार भी जुटाए दे रहे हैं। इसी सबको हम शिक्षा कहते हैं। अथवा, हम बच्चों में ख़ास तरीकों से सोचने और स्थापित आदर्शों के अनुरूप व्यवहार करने के संस्कार डालते हैं, हम चाहते हैं कि वह कैथोलिक, ईसाई, वैज्ञानिक, साम्यवादी, हिन्दू या ऐसा ही कुछ बन जाए। अतः सबसे पहली बात तो यह है कि क्या खुद शिक्षक को शिक्षित किया जाना महत्त्वपूर्ण नहीं है? निश्चित ही, शिक्षा तथ्यों का शिक्षण मात्र नहीं है – इन्हें तो कोई भी जिसे पढ़ना आता हो विश्वकोश में देख ले सकता है। अनिवार्यता तो प्रज्ञा को जाग्रत करने की है ताकि मन सवाल उठा सके, खोज सके, और धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक किसी भी रूप में संस्कारग्रस्त हुए बिना जीवन का सामना कर सके; और इस कारण से शिक्षक तथा अभिभावक दोनों का प्रज्ञावान होना आवश्यक है, है कि नहीं?

> मन को समस्त ज्ञान से, सारी स्मृति से रिक्त होना होगा। सिर्फ तभी एक नए रिश्ते की, एक नई दुनिया की कोई संभावना बनती है।

चूंकि यह बड़ी जटिल समस्या है जिसे विभिन्न पहलुओं से परखा जाना ज़रूरी है, अतः हम ऐसा नहीं कर सकते कि केवल यह निर्धारित कर दें कि सही शिक्षा के अनिवार्य तत्त्व क्या हैं, लेकिन हम यह देख सकते हैं कि इस समय पूरी दुनिया में हम जो कर रहे हैं, वह ग़लत, विनाशकारी और सर्जनविहीन है। सर्जनशीलता केवल तस्वीरें बनाना और आविष्कार करना नहीं है, न ही यह कविताएं, निबंध व पुस्तकें लिखना भर है। वह सब सर्जनात्मक हो भी सकता है, नहीं भी हो सकता है। किंतु महत्त्वपूर्ण वह आंतरिक सर्जनशीलता है जिसमें कोई भय नहीं है, आत्म–विस्तार की कोई चाह नहीं है, आक्रामकता, मनोवैज्ञानिक निर्भरता नहीं है, एक ऐसी स्थिति जिसमें स्वातंत्र्य है, एक ऐसा एकाकीभाव जिसमें अकेलापन नहीं है। यही सच्ची सर्जनशील अवस्था है और इसे जब हम स्वयं में जाग्रत कर लेते हैं, केवल तभी हम विद्यार्थी की उसकी प्रतिभाओं के विकास में, उसके अध्ययन में, संबंधों में इस प्रकार से सहायता कर सकते हैं कि उसके 'मैं' को बढ़ावा न मिले। किंतु मन की स्व–संलग्न गतिविधियों को ध्वस्त करने एवं उस सर्जनशीलता तक आने के लिए बहुत अधिक सावधान–अवलोकन की, लगातार अपने भीतर सतर्कता की दरकार होती है।

तो हमारी समस्या आसान नहीं है; लेकिन हमें शुरुआत ख़ुद से करनी होगी, क्या यह ज़रूरी नहीं है? स्वयं का ज्ञान ही प्रज्ञा का प्रारंभ है, और प्रज्ञा किसी अन्य के अनुभवों और कथनों को दोहरा देना मात्र नहीं है। प्रज्ञा में कोई प्रमाणसत्ता नहीं होती, इसका आविर्भाव तब होता है जब मन अपने स्वभाव की गहराइयों और विस्तारों को समझना आरंभ करता है; जिसके बारे में अनुमान नहीं लगाए जा सकते। मन को समस्त ज्ञान से, सारी स्मृति से रिक्त होना होगा। सिर्फ तभी एक नये रिश्ते की, एक नयी दुनिया की कोई संभावना बनती है।

जे. कृष्णमूर्ति : जीवन परिचय

और दृष्टियों से जुड़े लोगों का आना होता और वह सदा इस बात पर ज़ोर देते कि मनोवैज्ञानिक स्तर पर जिस तरह द्रष्टा दृश्य से भिन्न नहीं है, मनुष्य भी जगत से अलग नहीं है; बल्कि हम ही संसार हैं तथा अपने हर कृत्य के लिए स्वयं उत्तरदायी हैं। बाहर प्रकट हो रही सामूहिक अव्यवस्था एवं हिंसा हमारे भीतर की अव्यवस्था का ही नतीजा है जिसके लिए हममें से हर कोई ज़िम्मेदार है। सारी समस्याओं के मूल तक पहुंचने और अपने मन–मस्तिष्क की गतिविधियों का बारीकी से अवलोकन करने का उनका उत्कटता से आग्रह होता। जीवन को उसकी समग्रता में देखने के लिए वे बारम्बार श्रोताओं से कहते। मनुष्य के समग्र प्रस्फुटन और सम्यक शिक्षा से कृष्णमूर्ति का गहरा सरोकार था। इसके लिए उन्होंने विश्व के कई भागों में शिक्षा केंद्रों की स्थापना की जहां बच्चों एवं शिक्षकों को भय एवं प्रतिस्पर्द्धा से मुक्त वातावरण में समग्रता से विकसित होने का अवसर मिल सके। भारत में उनकी प्रेरणा से कई शिक्षा केंद्र स्थापित हुएः ऋषिवैली (आंध्रप्रदेश), राजघाट शिक्षा केंद्र (वाराणसी), द वैली स्कूल (बेंगलूरु), द स्कूल (चेन्नई), बाल आनंद (मुंबई) एवं सह्याद्री (पुणे)। इसके अलावा ओहाय, अमेरिका में ओक ग्रोव स्कूल तथा इंग्लैंड में ब्रॉकवुड पार्क की स्थापना हुई। प्राकृतिक सौंदर्य से सम्पन्न शांत वातावरण में स्थित ये सभी शिक्षा केंद्र विद्यार्थियों को भय, तुलना एवं स्पर्द्धा से मुक्त परिवेश उपलब्ध कराने की भरपूर कोशिश कर रहे हैं।

कृष्णमूर्ति के साहित्य में उनकी वार्ताएं, प्रश्नोत्तर, परिचर्चाएं, संवाद, साक्षात्कार, एवं उनका निजी लेखन शामिल है। उनका समग्र साहित्य प्रकाशित होने पर औसत आकार की करीब चार सौ किताबों का स्थान लेगा जिसमें से अभी तक लगभग साठ प्रमुख पुस्तकों का प्रकाशन हुआ है तथा विश्व की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में उनका अनुवाद भी किया जा रहा है। इसके अलावा बिलकुल प्रामाणिक और मूल रूप में उनकी शिक्षा ऑडियो एवं वीडियो माध्यमों में उपलब्ध है।

राजघाट में कृष्णमूर्ति

कृष्णमूर्ति के लेखन में गंगा नदी यानी ध्यानस्थ मन का मूर्तरूप – यह बार–बार आने वाला रूपक रहा। अपनी *नोटबुक* में वे लिखते हैं : 'ध्यान उस नदी के जैसा था, केवल उसका न आदि था न अन्त, उसका प्रारम्भ हुआ और उसका अन्त ही उसका उद्‌गम था।'

वाराणसी में गंगा के पवित्र जल प्रवाह की ओर ले जाने वाले पांच तीर्थ स्थानों में राजघाट आखिरी और नगर के आधुनिक केन्द्रीय स्थानों से बाहरी क्षेत्र में आता है। कृष्णमूर्ति फाउंडेशन के राजघाट शिक्षण संस्थान के आसपास हरा–भरा सुन्दर यह घाट, नदी का यह किनारा संन्यासियों, यात्रियों, मछुआरों, पहलवानों, संगीतकारों, बुनकरों, विद्यार्थियों एवं पर्यटकों को आकर्षित करता है। यह घाट सचमुच समय से परे हो जाने का भाव प्रकट करता है। पुराण और इतिहास, पावनता एवं संसार, अतीत और वर्तमान यहां सिमटकर खड़े हैं।

राजघाट में गंगा–वरुणा संगम के तट के ऊपरी हिस्से के भीतर वाराणसी का अधिकतर ऐतिहासिक अभिलेख दबा हुआ है। दो पुरातात्विक खनन द्वारा ऐसे तथ्य सामने आये हैं कि ईसापूर्व छठी और सातवीं सदी में यहां का एक फलाफूला नगर बसा था... पौराणिक कथा ने राजघाट को काल की चौखट से बाहर माना है। प्राचीन पंचक्रोशी मार्ग कपिलधारा ग्राम से आगे बढ़कर राजघाट को सारनाथ के साथ जोड़ता है, जहां बुद्ध ने अपना पहला उपदेश दिया था। यहां पर पहला प्रवचन करने से पहले राजघाट के निकट वरुणा पर खड़े पुल को बुद्ध ने पैदल पार किया था ऐसा बौद्ध ग्रंथों में वर्णित है। इस क्षेत्र में असंख्य मंदिर, छोटे देवालय एवं आश्रम बिखरे पड़े हैं...

1928 में बर्क्ले की महान यूनीवर्सिटी से प्रेरित होकर कृष्णमूर्ति ने अपनी स्वतंत्र शिक्षण संस्थाएं स्थापित करने का विचार बनाया। जगह की तलाश करते हुए शुरू से ही, ऐसा लगता है, कृष्णजी (कृष्णमूर्ति) को मालूम था कि उन्हें क्या चाहिए : वाराणसी में नदी के किनारे चार सौ एकड़ ज़मीन। डा. बेसेन्ट के निकट के नवयुवक संजीव राव को यह कार्य सौंपा गया। भारतीय शिक्षा सेवा के वे सदस्य थे। ज़मीन ख़रीदने के 'सनकी साहसिक कार्य' के लिये संजीव राव निकल पड़े, हालांकि उन्हें यह एक 'स्तम्भित करने वाला' प्रस्ताव लगता था। गंगा किनारे की ब्रिटिश सैनिक कैंटोनमेंट बोर्ड की डेढ़–सौ एकड़ जमीन को पक्का करके बुद्धिमत्ता एवं दृढ़ विश्वास के साथ उन्होंने अधिकारियों को भूमि बेचने के लिए राजी कर लिया। पैसे जुटाये गये और तब धीरे–धीरे सराय मुहाना ग्राम के समीप वरुणा पार दो सौ पचीस एकड़ भूमि ख़रीदी गयी।

राजघाट में 1928 से 1948 के कालखंड में राजघाट बेसेंट स्कूल के नाम से सह–शिक्षा देने वाला आवासीय विद्यालय खड़ा किया गया। कुछ समय बाद वसंत महिला महाविद्यालय एवं वसंत आश्रम (महिला होस्टल) यहां स्थापित हुए।

एक लम्बे समय की अनुपस्थिति के बाद जब कृष्णजी वाराणसी में 1948 में आये तब गंगा के किनारे स्थित एक भवन में रहे, जिसे अब 'कृष्णमूर्ति स्टडी सेंटर' में तब्दील कर दिया गया है। आगे के अड़तीस सालों तक वे इसी भवन में विद्यार्थियों, विद्वानों एवं विश्वभर के मुलाकातियों से बातचीत करने बार–बार आते रहे।

हिमालय से निकलकर गंगा उत्तर भारत के विस्तृत मैदानों में बहती हुई अन्त में बंगाल उपसागर में विलीन होती है। केवल वाराणसी के घाटों के मध्य, एकदम अकल्पित रूप से यह नदी उत्तर दिशा में अपने मूल स्थान की ओर मुड़ती है, नहीं तो वह दक्षिण–पूर्वीय दिशा में बहती जाती है। प्राचीन भूगोल विज्ञानियों के लिए नदी के प्रवाह का इस प्रकार स्वयं की ओर, ध्यानस्थ मन की तरह, मुड़ना नदी की पवित्रता का प्रतीक था।

कृष्णमूर्ति के लेखन में गंगा नदी यानी ध्यानस्थ मन का मूर्तरूप – यह बार–बार आने वाला रूपक रहा। अपनी *नोटबुक* में वे लिखते हैं : 'ध्यान उस नदी के जैसा था, केवल उसका न आदि था न अन्त, उसका प्रारम्भ हुआ और उसका अन्त ही उसका उद्‌गम था।'

राजघाट स्कूल के बच्चों को उन्होंने बताया : जीवन नदी के समान है। कभी भी स्थिर नहीं, नित्य प्रवाहित सदा जीवन्त और समृद्ध... इस स्थान को आपके लिए ऐसा वातावरण उपलब्ध कराना चाहिए जहां आपको प्रभावरहित, संस्कारमुक्त रहकर, बिना किसी आरोपण के ही बढ़ने का, विकसित होने का हर अवसर मिले, ताकि जब आप यहां से बाहर जायें तो जीवन को भयभीत हुए बिना प्रज्ञापूर्वक जी सकें।

'मानव को बिना शर्त मुक्त करना', कृष्णमूर्ति की इस उद्‌घोषणा में शिक्षा की भूमिका मूलभूत थी और इस प्रक्रिया के लिए जीवन के बारे में सीखना बहुत ज़रूरी था। उनके आह्‌वान का आशय था : युवकों की एक ऐसी पीढ़ी विकसित करना जो मूलभूत प्रश्न उठाने की क्षमता रखती हो, जो भय, क्रोध, द्वेष के क्रियाकलाप से स्वयं को मुक्त रख सके, परम्परा के बोझ को, अन्धविश्वास तथा मान्यताओं को हटाकर अतीत को किनारे लगा सके। यह आह्‌वान अपने आप में अपूर्व, अद्वितीय था। इसमें शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों शामिल थे। और इसमें निहित थे मानव जाति के व समाज के पुनरुत्थान के बीज।

जिस तरीके से कृष्णजी ने इस चुनौती को सामने रखा उनका वह ढंग ही झकझोर देने वाला था। उन्होंने शिक्षक के लिए कोई ऐसी जगह ही नहीं छोड़ी जहां स्थिर होकर वह शिक्षा–शास्त्रीय सिद्धान्तों में उलझ सके। शिक्षकों के मन पर सैकड़ों वर्षों की परम्परा की पकड़ है यह ध्यान में रखकर वे उनके साथ उत्कटता से चर्चा करते और उनसे सर्वोच्च अवधान की मांग करते थे। वे बारम्बार पूछा करते थे कि क्या ऐसे व्यक्तियों का कोई समूह है जो स्वयं में और विद्यार्थियों में आमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए कार्य करे?...

विद्यार्थियों के साथ कृष्णजी सौम्य और स्नेहशील रहते। वे भय के विषय में बोलते; बड़े धीरज के साथ वे स्पष्ट करते कि कैसे माता–पिता, अध्यापक, सारा समाज एवं धर्म मन–मस्तिष्क को एक ढांचे में ढालने के लिए डर का अनेक तरीकों से इस्तेमाल करते हैं। आदत, अनुकरण और अनुसरण मन एवं हृदयों का कैसे नाश करते हैं, अनेक तरीकों से वह इस ओर ध्यान दिलाते। फिर 'आज्ञाकारिता की हिंसा' के बारे में विद्यार्थियों को सजग कर वे वहां मौजूद बुजुर्गों को चौंका देते। राजघाट के विद्यार्थियों से कृष्णमूर्ति प्रभावित थे क्योंकि उनमें शांतिपूर्वक बैठकर सुनने का गुण था, कौतूहल व आश्चर्य का भाव था। 'ऐसी निश्छलता आप दुनिया में कहां पायेंगे' – उन्होंने एक बार कहा था। उनकी उपस्थिति में विद्यार्थियों को सभी प्रकार के सवाल पूछने की स्वतन्त्रता रहती थी।

भारतीय स्त्री की दयनीय हालत, उसकी दुर्दशा कृष्णमूर्ति के लिए एक गहरी चिन्ता का विषय

अगले पृष्ठ पर जारी

राजघाट में कृष्णमूर्ति

था। लड़कियां भी उन्हें सुनतीं और सोचतीं कि क्या कभी उनके लिए पुरुषों के दबाव से तथा अंधविश्वासों से मुक्त होकर अपना स्वावलम्बी जीवन जीना सम्भव हो सकता है? देश के गरीबों के लिए कृष्णमूर्ति की करुणा अपार थी। पड़ोसियों की देखभाल करना अपने स्कूलों को आना चाहिए ऐसी उनकी अपेक्षा थी। पुनः पुनः वे विद्यार्थियों को प्रेरित करके पूछते कि क्या गरीबों के साथ उनका कोई संबंध है। एक वार्ता में उन्होंने सीधे कहा था:

'देखिये, एक चमत्कारी बात है कि भारत हालांकि दुखों से भरा, उदास देश है, लेकिन यहां नित्य मुस्कुराहट रहती है। गरीब मुस्कुराते हैं। वे भूखे हैं, अत्याचार, दमन सहते हैं। फिर भी, आप जैसे ही रास्तों पर निकलेंगे, विशेषकर ग्रामीण इलाकों में, वे आपकी ओर देखकर मुस्कुराएंगे। यह दुनिया के अन्य क्षेत्रों में कहीं नहीं देखने को मिलता। यह इस देश का अनोखा उदाहरण है।

1954 में कृष्णमूर्ति ने अपने यौवनकाल के निकट के मित्र अच्युत पटवर्धन को ग्रामीण क्षेत्र में कार्य करने के लिए राजघाट बुलाया। गरीबों की अवस्था सुधारने के लिए कटिबद्ध अच्युत पटवर्धन की उपस्थिति ने यहां के स्थान को एक नयी गुणवत्ता दी... पचास के दशक के आरम्भ में कृष्णजी के श्रोताओं में मुख्य रूप से विद्यार्थी, अध्यापक एवं नगर से आने वाले भेंटकर्ता होते थे। साठ के दशक में उनके श्रोताओं में वृद्धि हुई तथा भारत के अन्य प्रदेशों से अपरिचित स्त्री–पुरुष अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को लेकर आने लगे, पश्चिमी देशों से असंख्य युवागण पहुंचे जो औद्योगिक विकास से हतोत्साहित होकर अब अपने जीवन के मूलभूत प्रश्नों को लेकर दुनिया भर में भटक रहे थे। सत्तर के दशक में श्रोतागण इतने बढ़ गये कि उनकी सुविधा के लिए विशेष शिविरों का आयोजन करना पड़ा। इसी दशक में बौद्ध एवं संस्कृत विद्वानों के समूह भी कृष्णजी के साथ दर्शन, काल और आध्यात्मिक पथ जैसे पारम्परिक विषयों को लेकर नियमित चर्चा के लिए आने लगे।

मृत्यु की नगरी काशी में वे प्रेम एवं सृजन पर बोलते थे। जिन लोगों को ऐसा विश्वास था कि अभ्यास करने से आध्यात्मिक विकास होता है, उनको उन्होंने समझाया कि आन्तरिक विकास में समय की कोई भूमिका नहीं। जीवन भर जो हां–हां कहने के अदी थे उनसे उन्होंने कहा : 'ना कहना ही श्रेष्ठ विचारणा है।'

...तीर्थयात्रियों का पुरातन मार्ग राजघाट से होकर वरुणा को पार करके नदी के उत्तरी तट को पीछे छोड़कर सारनाथ की ओर जाता है। राजघाट का 'रूरल सेंटर' वरुणा के उत्तरी तट पर है तथा सराय मोहाना, कपिलधारा एवं कोटवां गांव उसके चारों ओर बसे हैं। इमली, नीम एवं आम के उपवनों के बीच से होकर इस यात्री पथ पर कृष्णमूर्ति सैर के लिए जाया करते थे... कृष्णजी को राजघाट से प्रेम था, जैसा कि सचमुच उन सभी स्थलों से था जिन्हें उन्होंने अपनी उपस्थिति की सादगी से सृजित किया था। वह उनके लिए घर था। विशाल खेल के मैदान में घूमना उन्हें अच्छा लगता, वहां मित्र और बच्चे उनके साथ हो लेते और उनके कहने पर पूरे परिसर के चारों ओर टहलने का एक मार्ग बनाया गया। वे इस पथ पर प्रदक्षिणा करते घूमते या वरुणापार खुले प्रदेश में निकलते जिसका अपनी दैनन्दिनी में उन्होंने इतना स्पष्ट वर्णन किया है। परिसर के बहुत सारे वृक्ष कृष्णजी के लगाये हुए हैं और वृक्ष लगाने में सहभागी होने के लिए अपने मित्रों को आमन्त्रित करने में उन्हें विशेष खुशी होती थी। वट, आम, आंवला, अर्जुन जैसे प्रांगण को छाया देने वाले वृक्ष उनके इस गहरे भाव का प्रमाण हैं कि मनुष्यों को धरती पर अतिथियों के समान रहकर उसकी देखभाल करनी चाहिए, उसकी मिट्टी पर कोमलता से चलना चाहिए।

– अहल्या चारी

(*कृष्णमूर्ति एट राजघाट* की भूमिका से)

"सत्य का एक मात्र द्वार वर्तमान ही है, फिर यह चाहे जितना त्रासद और दर्दभरा हो।"

अगर आप अपने पलायन का माध्यम बदल लेते हैं तो उससे कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है... तो यह कैसे पता चले कि आपको करना क्या है? यह आप तभी जान सकते हैं, जब आप पलायन करना पूरी तरह से बंद कर दें।

'कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया' के लिए प्रकाशक, मुद्रक प्रो. पी. कृष्णा द्वारा सत्तनाम प्रिंटिंग प्रेस, एस–1/208 नयी बस्ती, पांडेयपुर, वाराणसी 221002 से मुद्रित एवं कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, राजघाट फोर्ट, वाराणसी 221001 से प्रकाशित।
सम्पादक : मुकेश
सम्पादन सहयोग : चैतन्य, सस्या (कला संयोजन)
तस्वीरें डा. चंद्रशेखर नायक के सौजन्य से